रंगभेद के खिलाफ गाँधीजी की भूमिका

डॉ. विद्यानन्द विधाता[1]

[1]अतिथि शिक्षक, इतिहास विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना।

रंगभेद वस्तुतः शारीरिक रंग के आधार पर किया जाने वाला एक सामाजिक बुराई है। यह मानव का दूसरे के साथ नफरत को जन्म देता है। इससे मानव द्वारा मानव के साथ प्रेम का सहयोग एवं सहानुभूति की जगह नफरत एवं घृणा तथा असहयोग को जन्म देता है। इन्हीं सामाजिक बुराईयों के संदर्भ में गाँधी द्वारा चलाया गया आन्दोलन जो प्रथम सत्याग्रह आन्दोलन भी माना जाता है, एक प्रतिरोधात्मक आन्दोलन था। इसकी प्रारंभिक शुरूआत उन्होंने दक्षिण अफ्रीका से किया। दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गाँधी के नेतृत्व में रंगभेद नीति के खिलाफ किया गया संघर्ष एक महान संघर्ष था। गाँधी की इस सफल प्रयास ने संपूर्ण विश्व में लोगों को जीने की एक धारा ही बदल दी। दक्षिण अफ्रीका से लौटने के उपरान्त 1893 ई० में ही एक कानूनी व्यवसाय के सिलसिले में पुनः प्रीटोरिया (दक्षिण अफ्रीका) जाना पड़ा। उन दिनों वहाँ राजसत्ता में कट्टरपंथी गोरे रंगभेदों की नीति को अपनाने पे जोर-शोर से लगे हुए थे। वहाँ हिन्दुस्तानियों एवं काले लोगों से जो घोर असमानता बरती जा रही थी उसका गाँधीजी पर बड़ी तेजी से असर पड़ा। गाँधीजी अपने वकालत के साथ-साथ रंगभेद का विरोध करने के लिए सार्वजनिक जीवन में कूद पड़े। यह आन्दोलन गाँधीजी के जीवन का प्रथम आन्दोलन था।[1]

19वीं शताब्दी के अंतिम दशक में दक्षिण अफ्रीका में जिस प्रकार का नस्लवादी भेद-भाव चल रहा था, उसका गाँधी पर गहरा प्रभाव पड़ा। स्थिति सुधारने के लिए एक ओर वे जनता के पास गये, तो दूसरी ओर उन्होंने नैतिक खोज के लिए एक आन्तरिक यात्रा शुरू की। इससे एक तो उन्हें आत्मबोध हो सका और साथ ही वह अफ्रीका और एशिया में रंगभेद और राजनीतिक दासता के विरुद्ध अपना महान संघर्ष शुरू कर सकें। गाँधी ने अपने दक्षिण अफ्रीका के प्रवास के बारे में लिखा है- "यहाँ मेरे अंदर की धार्मिक शक्ति सजीव शक्ति बन गयी। मैं दक्षिण अफ्रीका अपनी आजीविका कमाने के लिए गया था, परन्तु वहाँ मैं भगवान की खोज और आत्मबोध की प्राप्ति में लग गया।" गाँधीजी को दक्षिण अफ्रीका की स्थिति से जो पीड़ा हुई उससे उन्हें हिन्दू धर्म और जैन धर्म मत के ग्रंथों के अतिरिक्त अन्य धर्म ग्रंथों का आलोचनात्मक अध्ययन करने की प्रेरणा मिली, ताकि वह अपनी धार्मिक और दार्शनिक शिक्षा को और व्यापक बना सके। उन्होंने ईसाई समाजवादी नेता जॉन रस्किन और रूसी

उपन्यासकार और दार्शनिक लियो टॉलस्टाय का भी अध्ययन किया, जिन्होंने मानव अस्तित्व और जीवन की दैनिक समस्याओं में ईसाई मत के सिद्धान्तों को लागू करने का प्रयास किया था। रस्किन से गाँधी ने बौद्धिक एवं शारीरिक महत्ता को समझा, टॉलस्टाय से उन्होंने यह सीखा कि प्रेम और सहानुभूति से मानव स्वभाव को किस तरह बेहतर बनाया जा सकता है। यद्यपि गाँधीजी ने पश्चिम की धार्मिक व दार्शनिक साहित्य का गहन अध्ययन किया, परन्तु इसके फलस्वरूप उनके अंदर की पुरानी गहरी आस्थाएँ और उभरकर सामने आ गई। जैसा कि प्रसिद्ध विद्वान प्रोफेसर ए०एल० बाशम ने कहा था- "गाँधीजी के विचार पूरी तरह से भारतीय परम्परा के अनुरूप थे और शायद पश्चिम के संपर्क से वे कुछ विकसित हुए। गाँधीजी की विशेषता यह थी कि गैर-भारतीय विचारों को हिन्दू धर्म के साथ समरस करने में अन्य पुराने सुधारकों की अपेक्षा उन्हें अधिक सफलता मिली और उन्होंने उन विचारों को पूरी तरह भारतीय विचारों को एक स्वरूप प्रदान करने में सफलता प्राप्त की। ऐसा करते समय उन्होंने केवल पुराने सिद्धान्तों या विचारों से उन्हें जोड़ा।"[2]

गाँधीजी द्वारा रंगभेद नीति के खिलाफ के संघर्ष की गाथा उस समय शुरू होती है जब वे 1996 में अपनी पत्नी, दो पुत्रों और एक भतीजे को लेकर दक्षिण अफ्रीका के लिए रवाना हो गये। जब जहाज बम्बई से सीधा डरबन पहुँचा तो वहाँ श्वेतों ने उन्हें प्रवेश से रोकने का प्रयास किया। उन्हें भारत लौट जाने को कहा गया। नहीं लौटने पर समुद्र में डूबों देने की बात कही गई। गाँधी इस बात को मानने से इन्कार कर दिया। अन्ततः प्रतिवाद के बाद गाँधी को वहाँ उतरने की अनुमति मिल गई। गाँधीजी के साथ एक वकील लाटन भी थे। गाँधीजी लाटन के साथ नीचे उतरकर चलने लगे। कुछ उपद्रवी लोगों ने 'गाँधी-गाँधी' का शोर मचाना शुरू कर दिया और बात ही बात में वहाँ भीड़ इकट्ठी हो गई। लाटन उस एक रिक्शे को बुलाया। गाँधीजी इस रिक्शेवाले वाहन को हमेशा शोषण करने वाला ठहराते थे। रिक्शेवाले को डराया-धमकाया गया था, जिससे वह भाग गया। गाँधीजी को भीड़ में पैदल ही जाना पड़ा। गाँधीजी पर पत्थरों एवं सड़े हुए अंडों से हमला किया गया, उनकी पगड़ी फाड़ दी गई। उन्हें बुरी तरह लात-घूसों से पीटा गया। इसी दौरान पुलिस अधीक्षक की पत्नी श्रीमती एलेक्जेन्डर के रूप में एक अंग्रेज मददगार उनकी सहायत के लिए आ पहुँची। वे गाँधी को जानती थी और जब उन्होंने देखा कि लोहे की रेलिंग से लिपटने की कोशिश करते हुए अर्ध-मुर्छित से इस छोटे से आदमी पर दंगाई लगातार प्रहार किए जा रहे थे। निर्भय होकर श्रीमती ऐलेक्जेन्डर बचाव में पहुँची और भीड़ तथा गाँधीजी के बीच छाता खोलकर खड़ी हो गई। छाता तो प्रतीक मात्र थी, लेकिन भीड़ में सभी लोग श्रीमती एजेक्जेन्डर को जानते थे, उन्हें

हाथ लगाने की हिम्मत किसी को नहीं हुई। गाँधी अब सुरक्षित हो गये थे। पुलिस अधीक्षक समय पर पहुँच गया। पुलिस की सुरक्षा में गाँधीजी को रूस्तमजी के घर ले जाया गया लेकिन वहाँ भी उन्हें मार डालने की नियत से भीड़ एकत्र हो गई। एलेक्जेन्डर ने गाँधी को सिपाही के वेश में पिछे से निकाल लिया। इससे गाँधी सुरक्षित बच गये और भीड़ भी पुलिस अधीक्षक द्वारा नियंत्रित कर ली गई।[3] इस घटना के पीछे श्वेतों (अंग्रेज) की सोची-समझी चाल थी। पहले तो वे गाँधी को दक्षिण अफ्रीका आने से माना किया, नहीं मानने पर प्रवेश के उपरान्त उनपर बुरी तरह प्रहार करवाया गया और बाद में बचाने का प्रयास हुआ। तीन दिनों तक गाँधीजी को थाने में रखा गया। इस दौरान उन्हें पहरा में रहना पड़ा। तुफान भी थम गया। बाद में पता लगा कि गाँधीजी के खिलाफ जो अरोप लगाए थे वे सारे के सारे मिथ्या साबित हुए। और अंग्रेज गाँधीजी सहित सभी भारतीयों को जहाज से वापस भेजना चाहते थे, लेकिन गाँधी नहीं माने। इसी कारण उनके साथ प्रायोजित अपमान करवाया गया था।[4]

दक्षिण अफ्रीका में गाँधीजी ने भेदभाव का जो दृश्य देखा वह उन्हें झकझोर दिया। डरबन पहुँचकर गाँधीजी को ज्ञापन तैयार करने एवं उसे प्रस्तुत करने का वक्त मिल गया। फिर नाटाल से ट्रॉन्सवाल जाना भी जरूरी समझा। वहाँ चैम्बर लेन पहुँचने वाला था, और वहाँ भी गाँधीजी को ट्रॉन्सवाल के भारतीय समुदाय के लिए यही सबकुछ करना था। ट्रॉन्सवाल, डरबन एवं नाटाल में भारतीयों के साथ निर्भय एवं कठोर बर्ताव था। प्रशासन का भारतीयों के साथ निर्मम, निरंकुश एवं अत्याचारपूर्ण व्यवहार था। ऐसी ही स्थिति कुछ जोहान्सवर्ग में भी था।

6 नवम्बर, 1913 को गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद के नीतियों के खिलाफ 'द ग्रेट मार्च' का नेतृत्व किया। रंगभेद को लेकर ये संघर्ष दक्षिण अफ्रीका में सात साल तक चला, लेकिन गाँधीजी के नेतृत्व में भारतीय अल्पसंख्यकों के एक छोटे से समुदाय ने अपने विरोधियों के खिलाफ जी-जान से संघर्ष जारी रखा। गाँधीजी के इस मार्च में दो हजार भारतीय खाद्यान्न कर्मियों ने न्यूकासल से नेटाल तक की पदयात्रा की। बताया जाता है कि जब महात्मा गाँधी ने इस मार्च की अगुआई की थी, उस वक्त 127 महिलाएँ, 57 बच्चें, 2037 पुरुष शामिल थे। हालांकि गाँधी को उनके समर्थकों के साथ गिरफ्तार कर लिया गया।[5]

साल 1906 में टॉन्सबाल सरकार ने दक्षिण अफ्रीका के भारतीय जनता के पंजीकरण के लिए अपमानजनक अध्यादेश जारी किया, जिसके बाद इस कानून के खिलाफ विरोध किया गया। भारतीयों ने वर्ष 1906 में गाँधी के नेतृत्व में एक जनसभा का आयोजन किया और इस कानून के खिलाफ विरोध किया। इसी के बाद गाँधीजी द्वारा सत्याग्रह का जन्म हुआ।[6] यह पलटवार के बजाय अहिंसा पर विश्वास करता था। रंगभेद को लेकर ये संघर्ष दक्षिण भारतीयों ने अपनी अन्तरात्मा और स्वाभिमान को चोट पहुँचाने वाले कानून के सामने झूकने के बजाय अपनी स्वतंत्रता को बलि चढ़ाना पसछन किया। अनेक संघर्ष के बाद 1913 में इस आन्दोलन के अंतिम चरण में सैंकड़ों भारतीयों को जेल जाना पड़ा। इनमें अनेकों महिलाएँ भी थीं। दूसरी ओर जिन मजदूरों ने काम से इन्कार कर हड़ताल पर बैठे हुए थे, उन्हें कोड़ों की मार, जेल भेजने तथा गोली मारने के आदेश दिए गए।[7]

आखिरकार, भारतीयों को कड़ी मेहनत और संघर्ष का परिणाम अच्छा प्राप्त करने को मिला। सरकार ने दबाव में समझौतों को स्वीकार की। इस समझौतों को लेकर गाँधीजी और दक्षिण अफ्रीकी सरकार के प्रतिनिधि जनरल जॉन किश्चियन स्मेट्स के बीच बातचीत हुई। अन्ततः समझौता हुआ और भारतीय राहत विधेयक पास किया गया। इस तरह गाँधीजी का प्रथम सत्याग्रह का समापन सफल रहा, जो काले-गोरों के बीच रंगभेद एवं अत्याचार के खिलाफ था।[8]

दक्षिण अफ्रीका में नेशनल पार्टी की सरकार द्वारा सन् 1948 में कानून बनाकर काले एवं गोरों के लिए अलग निवास की प्रणाली लागू की गई। इसे 'रंगभेद की नीति' का 'आपार्थैर्ट' कहते हैं। आपार्थैर्ट का अर्थ होता है-अलगाव या पृथकता। इस नीति को सन् 1994 में समाप्त कर दी गई। नेलसन मंडेला ने इसके विरुद्ध लंबे दिनों तक संघर्ष किया और सफलता प्राप्त की। इस तरह गाँधी की अहिंसात्मक सत्याग्रह ने नेल्सन मंडेला के लिए आदर्श का काम किया। यही नहीं यांग सांग सूफी ने भी गाँधी के आदर्शों को आत्मसात कर अपने देश में आंदोलन को सही दिशा प्रदान किया। आज लगभग सभी लोकतांत्रिक देशों में गाँधी के आदर्शों को अपनाकर समस्याओं की समाधान का प्रयास करते हैं।

दक्षिण अफ्रीका में सफल सत्याग्रह के बाद गाँधीजी जनवरी, 1915 में भारत लौटे। दक्षिण अफ्रीका में शोषण, अन्याय एवं रंगभेद के नीति के विरुद्ध सफल सत्याग्रह का प्रयोग कर चुके थे। स्वदेश आने के बाद ब्रिटिश सरकार की गुलामी से मुक्ति दिलाने के लिए गाँधीजी ने भारत में अनेक आन्दोलन किए। भारत आने पर वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी के साथ

जुड़ गये। उन्होंने सर्वप्रथम पूरे भारतीय परिवेश का भ्रमण कर देश का जायजा लिया। इसके बाद भारतीय राष्ट्रीय जैसी संस्था को पूर्ण स्वतंत्रता का लक्ष्य देकर संघर्ष में कूद पड़े। प्रथम विश्वयुद्ध में वचन देकर भी अंग्रेजी सरकार ने भारतीयों के प्रति अपने रवैया में कोई परिवर्तन नहीं किया। इससे गाँधी चिढ़ गये और आन्दोलन का बिगुल बजा दिया।

भारत में गाँधीजी द्वारा किया गया प्रथम सत्याग्रह 'चम्पारण सत्याग्रह' था, जो गोरे निल्हों से वहाँ के किसानों को मुक्ति दिलाने से जुड़ा था। इसमें गाँधी को सफलता मिली। उसके बाद क्रमशः खेड़ा आन्दोलन, अहमदाबाद मिल मजदूरों का आन्दोलन, रॉलट एक्ट प्रतिरोध आन्दोलन, असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन, भारत छोड़ो आन्दोलन एवं पिछड़ों, दलितों की समानता एवं अधिकार से संबंधित प्रयास थे। इन आन्दोलनों के माध्यम से गाँधी ने भारतीय परिवेश में व्यापक पैमाने पर अंग्रेजों द्वारा की जा रही मनमानी का सत्य, अहिंसा से अंत किया। विदेशी बहिष्कार एवं विदेशी माल का दाह, मद्य निषेध के लिए धरने का आयोजन, अछुतोद्धार, स्वदेशी प्रचार के लिए चरखे और खादी को महत्व देना, सर्वधर्म समन्वय, हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए प्रचार-प्रसार गाँधी के कार्यक्रमों में शामिल थे, जिनसे भारतीयों को मजबूती मिली और ब्रिटिश सरकार कमजोर पड़ी। अन्ततः गाँधीजी के प्रयासों के परिणामस्वरूप भारत में ब्रिटिश सरकार विवश एवं त्रस्त होकर 15 अगस्त, 1947 ई० को भारत को आजाद कर दिया।

निष्कर्ष

इस प्रकार रंगभेद की नीतियों का गाँधीजी ने अपने सत्य एवं अहिंसा जैसे हथियारों से दूर कर दिया। इसके साथ-ही-साथ उन्होंने सभी प्रकार के असमानताएँ, शोषण, अत्याचार एवं सामाजिक बुराइयों के खिलाफ भी इस सत्य एवं अहिंसा रूपी अस्त्र का इस्तेमाल किया और सफलताएँ भी प्राप्त की। निश्चित तौर पर सत्याग्रह एक अचूक हथियार सिद्ध हुआ। यह एक नई अवधारणा थी, जिसको व्यवहारिक रूप गाँधीजी ने दिया। आत्मानुशासन और अहिंसा के कठोर अनुशासन के कारण यह गाँधीजी के पूर्ण नियंत्रण में था तथा मानव संघर्ष के तरिकों में एक अभिनव प्रयोग था। सालों बाद भारत और इंग्लैंड में लोग इसका ठीक-ठाक मतलब समझ पाये थे।[11] गाँधीजी के इस हथियार का सफल प्रयोग बाद के काल में नेल्सन मंडेला एवं आंग-सांग सूकी सहित अनेक नेताओं अपने-अपने लोकतांत्रिक देशों में किया।

संदर्भ-सूची

1. राव, पी०वी० नरसिंह: 20वीं शताब्दी के युग पुरुष, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, अगस्त, 1995, पृ०-06.
2. वही, पृ०-07-10.
3. विसेन्ट शीन: गाँधीजी: एक महात्मा की संक्षिप्त जीवनी, नई दिल्ली, 1994, पृ०-510.
4. वही, पृ०-56-58.
5. रोमॉ रोलां: महात्मा गाँधी जीवन और दर्शन, नई दिल्ली, 2011, पृ०-12-14.
6. एम०के० गाँधी: दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास, नई दिल्ली, 2011, पृ०-171-72.
7. वही, पृ०-191-95.
8. गिरिराज किशोर, गिरमिटिया गाँधी, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली-2009, पृ०-25-26.
9. एम०के० गाँधी: आत्मकथा, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, 1969, पृ०-35-36.
10. कृष्ण किशोर पाण्डे: गाँधी दर्शन और सामाजिक समस्याएँ, योजना वर्ष-38, अंक-16, सूचना प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, 15 अक्टूबर, 1994, पृ०-02-03.
11. बैकुण्ठनाथ सिंह: भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन एवं सांविधानिक विकास, पटना, 1978, पृ०-103.